भारतीय हिन्दी सिनेमा और चित्रकला का सहः सम्बन्ध

प्रीति रतन
शोधार्थिनी
ललित कला विभाग
मेरठ कॉलेज, मेरठ।
ईमेलः preetiratan1990@gmail.com

प्रो0 अंजू चौधरी
शोध निर्देशिका एवं प्राचार्या
महिला महाविद्यालय
किदवई नगर, कानपुर, (उ0प्र)

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 23.04.2025
Approved: 26.05.2025

प्रीति रतन
प्रो0 अंजू चौधरी

भारतीय हिन्दी सिनेमा और चित्रकला का सहः सम्बन्ध

Vol. XVI, Sp.2Issue May 2025
Article No.19, Pg. 150-156

Online available at
https://anubooks.com/special-issues?url=jgv-si-2-rbd-college-bijnore-may-25

DOI: *https://doi.org/10.31995/jgv.2025.v16iSI005.019*

सारांश

सृजन की प्रवृत्ति हमारे पूर्वजों (आदिमानव) में भी जीवन के प्रारम्भ से ही रही है। जिससे मानव ने अपने मन की अभिव्यक्ति को नवीन स्वरूपों में नये–नये मापदण्डों के आधार पर चित्राकृति के रूप में प्रस्तुत किया है। इसी के साथ कला ने प्रागैतिहासिक काल से आधुनिक काल तक क्रमशः गुफा चित्रों, भित्ति चित्रों स्थापत्य कला और लघु चित्रों आदि के रूप में विभिन्न चरणों से गुजरते हुए आधुनिक व समकालीन स्वरूप धारण किया है। पैल चित्रों में प्रारम्भ होकर आज चित्रकला ने आधुनिक सृजनात्मक स्वरूप प्राप्त कर लिया है और इस प्रकार चित्रकला प्रत्येक काल में मानव के भाव प्रदर्षन में सहायक सिद्ध हुई है एवं सम्प्रेक्षण का माध्यम रही है

चित्रकला ने ही विकसित होते हुए चलचित्रों का स्वरूप ग्रहण कर लिया। भारतीय हिन्दी सिनेमा में चित्रकारों की भूमिका को निम्न के द्वारा समझा जा सकता है–

सिनेमा चल–चित्रों के सहारे से कहानी कहने का एक माध्यम है चित्रकला से ही प्रेरणा लेकर सिनेमा जगत का विकास हुआ इसी से प्रारम्भ में इसे चलचित्र नाम से जाना जाता रहा है। अर्थात् प्राचीन कलात्मक चित्रों ने ही चलचित्रों की पृष्ठभूमि तैयार की और चित्र ही इसके आने वाले उज्ज्वल व उन्नतिपरक भविष्य के आधार रहे हैं। जिसके द्वारा ही सिनेमा (चल चित्रण) का सह सम्बन्ध चित्र कला से माना जा सकता है। चित्रकला का ही तकनीकी पक्ष छायाचित्रांकन माना जा सकता है अर्थात छायाचित्र (Photography) स्वयं में चित्र का कैमरे की सहायता से ले लेना ही है जो कि मानव की वैज्ञानिक उन्नति का घोतक है।

सन् 1898 में हीरालाल सेन, मोतीलाल सेन, देवकी लाल सेन और भोलानाथ गुप्ता ने साथ मिलकर रॉयल बायोस्कोप कंपनी की बंगाल में स्थापना की थी जो कि बंगाल की पहली फिल्म निर्माण कम्पनी थी। बायोस्कोप एक ऐसा उपकरण है जो चलती हुई तस्वीरें देखने में मदद करता है जिसे अब फिल्म (चलचित्र), प्रोजेक्टर के रूप में जाना जाता हैं छायाचित्रों का बायोस्कोप से प्रदर्शन सिनेमा का प्रथम चरण था।

**This article has been peer-reviewed by the Review Committee of JGV.*

https://doi.org/10.31995/jgv.2025.v16iSI005.019

मुख्य बिंदु

सिनेमा (चल चित्र), बायोस्कोप (प्रोजेक्टर), समप्रेषण, तकनीक, सिनेमेटोग्राफ, प्रर्दशदन, दर्शयात्मक, फ्रेमिग, छायाचित्र, स्क्रीन (पर्दे), मनोरंजन, सिद्धान्तीकी, सजनात्मकता, संयोजन, आर्कषक, समाजस्य।

बायोस्कोप

प्रोजेस्टर

सिनेमा का एक प्रारम्भिक स्वरूप बायोस्कोप रहा है। बायोस्कोप अर्थात् चलचित्रों के प्रारम्भिक रूप में चित्रकला की भूमिका यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से नही है परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से काफी महत्वपूर्ण हे बायोस्कोप एक ऐसा उपकरण है जो चलती हुई तस्वीरें देखने में मदद करता है जिसे अब फिल्म (चलचित्र), प्रोजेक्टर के रूप में जाना जाता हैं सन् 1898 में हीरालाल सेन, मोतीलाल सेन, देवोकी लाल सेन और भोलानाथ गुप्ता ने साथ मिलकर रॉयल बायोस्कोप कंपनी की बंगाल में स्थापना की थी जो कि बंगाल की पहली फिल्म निर्माण कम्पनी थी।[1] उन्होंने शुरू में अर्बन बायोस्कोप कैमरा का इस्तेमाल किया जिसने आधुनिक चलचित्र सिनेमा की नींव रखी।

सन् 1892 मे जॉर्जेस डेमेनी ने मोशन पिक्चर डिवाइस का पेटेंट कराया जिसका नाम उन्होंने फोनोस्कोप रखा, बाद में इसका नाम बदलकर बायोस्कोप कर दिया गया। वर्ष 1985 में लुमियर बंधुओं ने पेरिस में प्रोजेक्टेड मूविंग पिक्चर्स का प्रदर्शन किया, जो सिनेमेटोग्राफ के माध्यम से दिखाए गए। बायोस्कोप या सिनेमा में चित्रकला की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह न केवल कला के रूप में बल्कि कहानी कहने, दृश्यों को चित्रित करने और दर्शकों के अनुभव को समृद्ध करने के लिए एक आवश्यक तत्व है। फिल्म निर्माण में चित्रकला, तकनीके जैसे कि फ्रेमिंग, रंगयोजना और प्रकाश व्यवस्था कहानी को बताने और दर्शकों पर प्रभाव डालने में मदद करती है। चित्रकला फिल्म की कहानी को दृश्यात्मक रूप से प्रस्तुत करने में मदद करती है उदाहरण के लिए एक विशिष्ट रंग योजना का उपयेाग करके फिल्म के मूड या माहौल को स्थापित किया जा सकता है।

चित्रकला फिल्म में कलात्मकता और सौंदर्य को जोड़ती है। फिल्म के निर्देशक चित्रकला सिद्धान्तों का उपयोग करके एक खास दृश्य या दृश्य क्रम को बना सकते हैं। जो दर्शकों को प्रभावित करता है।

भारत में ही नहीं वरन् वैश्विक स्तर पर **सिनेमैाटोग्राफी** में चित्रकला के महत्व व सामंजस्य को स्वीकारा गया है – रिचिऑटो कैनुडा, जो कि इतालवी फिल्म सिद्धान्तकार थे, ने अवंत – गार्डे लेखकों और कलाकारों के साथ मिलकर काम किया। सन् 1913 में उन्होंने मोंटजोई नामक पत्रिका को प्रकाशित किया, जो कि विषेश रूप से क्यूबिज़्म को बढ़ावा देने वाली एक द्विमासिक पत्रिका थी। सन् 1911 में प्रकाशित अपने घोषणा पत्र 'द बर्थ ऑफ द सिक्स्थ आर्ट में कैनुडो ने तर्क दिया था कि सिनेमा एक नई कला थी। "अंतरिक्ष की लय और समय की लय का एक शानदार मेल।" उन्होंने सिनेमा को 'गतिशील प्लास्टिक कला' के रूप में देखा और इसे 'छठी कला' का नाम दिया। कैनुडो ने फिर छठी कला के अग्रदूत के रूप में नृत्य को जोड़ा और सिनेमा को सातवीं कला बना दिया।

कैनुडो का कहना था कि यद्यपि वास्तु कला की उत्पत्ति सुरक्षा पाने की भौतिक आवश्यकता के कारण हुई थी फिर भी मूर्तिकला और चित्रकला जैसे अन्य कलाओं से सामंजस्य रखती है। इसी क्रम में सिनेमैटोग्राफ को एक प्रसार उपकरण के रूप में वर्णित किया और माना कि कई कलात्मक प्रस्तुतियों के संयोजन से वास्तुकला, कविता या चित्रकला के माध्यम से हम सभी उन भावनाओं का प्रयोग कर सकते हैं जो हमें इतिहास के माध्यम से प्रेरित और आगे बढ़ाती है। कैनुडो लिखते हैं कि सिनेमैटोग्राफ के दो महत्वपूर्ण तत्व हैं – प्रतीकात्मक और वास्तविक। कैनुडो ने प्रतीकात्मक पहलू की गति के रूप में वर्णित किया है। उनका मानना था कि इस वैज्ञानिक सफलता ने मानवता के लिए अवसर पैदा किया है "जो सक्रिय रूप से अपना स्वयं का प्रदर्शन, स्वयं का अधिक सार्थक प्रतिनिधित्व तलाशती है।" चूँकि मनुष्य वर्षों से अपनी छवियाँ बनाता आ रहा है फिर भी इन्हें गति केवल सिनेमैटोग्राफी के आगमन के बाद ही मिली[2] अर्थात् चित्रों व छायाचित्रों का गतिशील रूप ही प्रारम्भ में चलचित्र कहलाया जो कि धीरे–धीरे सिनेमा के रूप में विकसित होता चला गया। वास्तव में सिनेमा कई कलाओं की सम्मिश्रित विधा हैं नृत्य, गीत, संगीत, अभिनय अर्थात् नाट्य, चित्रकला सभी कलाएँ इसमें समाहित हैं।[3] इसीलिए सिनेमा आम जनता से आसानी से संवाद करने में सफल हुआ हैं आज के आधुनिक काल में सिनेमा एक कलात्मक स्वरूप है जिसका आज समाज में बहुत गहरे से जुड़ाव है।

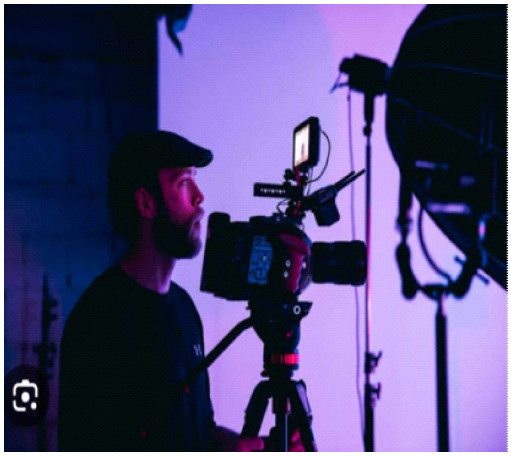

सिनेमा की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह तत्कालीन समाज का चित्रण करने में सक्षम है। समाज की किसी समस्या या संवेदना को सिनेमा प्रचारित व प्रसारित करने में प्रभावशाली है जैसा किसी अन्य माध्यम के द्वारा संभव नहीं है। सिनेमा को केवल मनोरंजन तक सीमित नहीं किया जा सकता वरन् सिनेमा ने भारतीय समाज को अत्यधिक प्रभावित किया है सिनेमा ने न केवल समाज को प्रभावित किया है वरन् वह समाज से उसी प्रकार प्रभावित भी होता है। इसीलिए चरित्र प्रधान या किसी घटना पर आधारित फिल्में (सिनेमा) सामाजिक बदलाव के उद्देश्य की पूर्ति हेतू सृजित की जाती है।

https://doi.org/10.31995/jgv.2025.v16iSI005.019

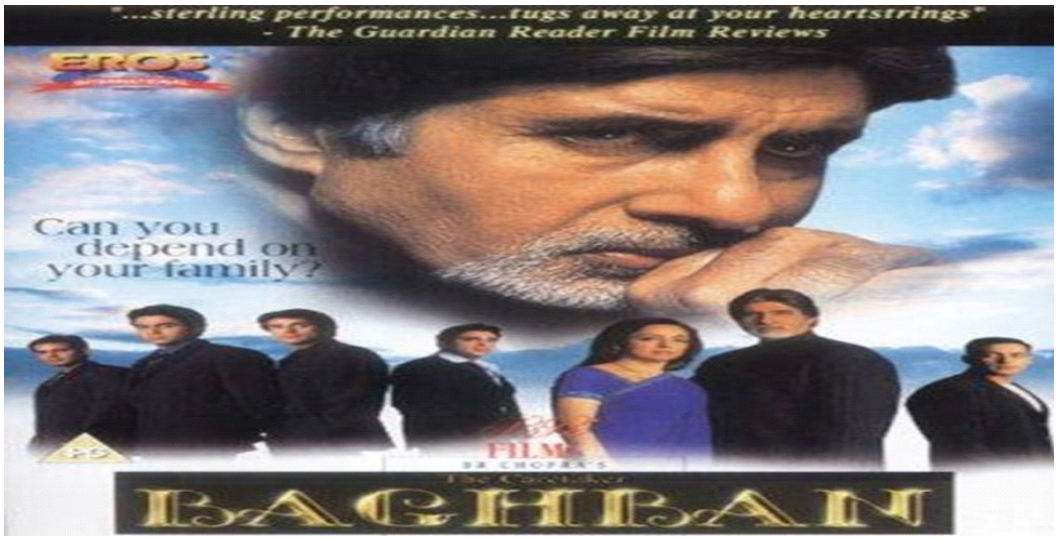

सिनेमा चल–चित्रों के सहारे से कहानी कहने का एक माध्यम है जिसके अन्तर्गत अक्सर स्क्रीन (पर्दे) पर फिल्मों का निर्माण और प्रक्षेपण शामिल होता है। अथवा कहा जा सकता है कि नाट्य का स्वरूप धीरे–धीरे चल–चित्रण के माध्यम से विश्वविख्यात हो गया। जिसके द्वारा आसानी से सम्प्रेषण, कला व मनोरंजन उद्योग का विकास उत्तरोत्तर होता गया। चित्रकला से ही प्रेरणा लेकर सिनेमा जगत का विकास हुआ इसे ही प्रारम्भ से चलचित्र नाम से जाना जाता रहा है। अर्थात् प्राचीन कलात्मक चित्रों ने ही चलचित्रों की पृष्ठभूमि तैयार की और चित्र ही इसके आने वाले उज्ज्वल व उन्नतिपरक भविष्य के आधार रहे हैं। क्योंकि नाट्य परम्परा में भी चित्रों की अहम् भूमिका रहती थी। रंगमंच पर नाटकों के मंचन में भी पृष्ठभूमि में दृश्य की आवश्कतानुसार चित्रों का प्रयोग किया जाता रहा है तथा नाटक के पात्रों की साज–सज्जा में भी चित्रकला के तत्वों व सिद्धान्तों को विशेष रूप से प्रयोग किया जाता रहा। जिसमें कई बार कलाकार भी चित्रकला की पृष्ठभूमि के ही होते थे।

कलाएँ मनुष्य की सृजनात्मकता की परिचायक होती है। मनुष्य ने कभी अपनी अभिव्यक्ति तो कभी अपने मनोरंजन के लिए अनेक कलाओं का सृजन किया है और देखा जाए तो अन्य समस्त कलाओं में सिनेमा आज सबसे अधिक लोकतांत्रिक है क्योंकि वह समाज के हर वर्ग तक अपनी पहुँच रखता है। अपनी इस पहुँच और क्रांतिकारी प्रभाव के कारण सिनेमा आज सम्पूर्ण विश्व में अपनी पहचान रखता है। यद्यपि फ्रांस ने सिनेमा विधा को जन्म दिया था। सिनेमा के जनक लूमियर बंधु ह्यआगस्ट और लुईह तथा जॉर्ज मिलिए तीनों फ्रांस के नागरिक थे। लूमियर बंधु छायांकन के क्षेत्र में लगातार कई वर्षों तक अभिनव प्रयोगों में संलग्न रहे। अपने प्रारम्भिक प्रयोगों में सफलता पाने के बाद उन्हें यथार्थ को प्रस्तुत करने के लिए चलचित्रों का माध्यम सर्वश्रेष्ठ लगा। 28 दिसम्बर 1895 को पेरिस में पहली बार जब उन्होंने स्टेशन पर आ रही रेलगाड़ी, फैक्ट्री से छूटने के बाद घर जाने के लिए बाहर आते मजदूरों तथा बागीचों में पानी देते माली के चलचित्र प्रदर्शित किए तो इन फिल्मों में स्थान, समय तथा परिवेश के प्रामाणिक प्रस्तुतीकरण ने यथार्थ को जी लेने का अनुभव कराया[4] जो कि अति विशिष्ट रहा।

प्रीति रतन, प्रो0 अंजू चौधरी

हिन्दी सिनेमा एक अध्ययन/कला विधा के रूप में सिनेमा और उसकी सैद्धांतिकी का एहसास कराता था। सिनेमा का इतिहास बहुत अधिक प्राचीन नही है। यह 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से शुरू होता है जब थॉमस एडिसन और लूसियर बंधुओं जैसे आविष्कारकों ने प्रारम्भिक चल–चित्र तकनीक विकसित की थी। वर्ष 1896 को लंदन में ल्यूमियर और राबर्ट पॉल की स्क्रीनिंग के बाद, व्यावसायिक छायांकन दुनिया भर में सनसनी बन गया और 1896 के मध्य तक बम्बई (अब मुम्बई) में लुमियर और राबर्ट पॉल दोनों की फिल्मों को दिखाया गया था।[5]

भारतीय हिन्दी सिनेमा में चित्रकारों की अहम् भूमिका रही है। चित्रकारों द्वारा बनाये गये चित्रों से ही सिनेमा को तत्कालीन स्वरूप प्रदान हुआ। क्योंकि हिन्दी सिनेमा में जब भी फिल्मांकन होता है उसकी शुरूआत रूपरेखा तैयार करने के पश्चात् होती है और ये रूपरेखा एक चित्रकार द्वारा तैयार की जाती है इसमें चित्रकार को ही मंच सज्जा जहाँ करनी होती है, वहीं पर बैठकर चित्रांकन करता है तथा फिल्म मंचन हेतु मंच तैयार कराने के लिए डिजाइन–चित्रों के माध्यम से तैयार करता है उसका माप–तौल, रंग संयोजन, रंगों का सही चयन सही रूप रेखा द्वारा चित्र में अंकित करता है। तत्पश्चात् फिल्म निर्देशक अपना कार्य प्रारम्भ करता है। इसमें होने वाली किसी भी प्रकार की त्रुटि **'रफ ले आउट'** में ही ठीक कर ली जाती है।

रफ ले आउट

आउटडोर शूटिंग

यहाँ पर फिल्म निर्देशक द्वारा निर्देशन दिया जाता है जो कहानी प्रस्तुतीकरण में पात्रों का मार्गदर्शन करते हैं। जहाँ चित्रकार अभिनय के लिए चित्र अंकित करता है कि वह किस प्रकार का होना चाहिये उसके वस्त्र उसके किरदार के अनुरूप होने चाहिये। वह अन्य पात्रों के व्यक्तित्व से हटकर अभिनेता जैसा दिखना चाहिये तथा मंच सज्जा में पर्दे किस प्रकार के होने चाहिये ये सब चित्रकार द्वारा चित्रों में पहले ही अंकित कर लिया जाता है। दीवार पर कैसी सजावट होनी चाहिये, वृक्ष किस तरह से लगने चाहिये। इन सबका कार्य एक चित्रकार द्वारा किया जाता है। फिल्म के प्रचार प्रसार हेतु जो पोस्टर, बैनर्स आदि तैयार किये जाते हैं वह भी चित्रकार द्वारा ही बनाया जाता है। चित्रकार ही यह करता है कि शीर्षक को कितना बड़ा व आकर्षक दिखाना है व आस–पास कैसा चित्रण किया जाये जिससे सम्पूर्ण फिल्म एक शीर्षक से पहचानी जा सके।

https://doi.org/10.31995/jgv.2025.v16iSI005.019

'सत्यजीत रे' आधुनिक जगत के चित्रकार और फिल्म निर्माता रहे हैं। सत्यजीत रे स्वयं कैमरा लेकर अपनी स्टूडियो से आउटडोर शूटिंग के लिए निकल पड़ते थे। इन्होंने फिल्म पोस्टर्स मोटी–मोटी रेखाओं से बनाये और साथ में प्रतीकात्मक चित्रों का भी प्रयोग किया। इनका नाम जितना कला जगत में है उतना ही फिल्म जगत में। भारतीय हिन्दी सिनेमा में चित्रकला और चित्रकारों के सामंजस्य को जानने के लिए भारतीय हिन्दी सिनेमा के इतिहास को यहाँ जानना भी यहाँ श्रेयस्कर है।

बम्बई में ही सन् 1880 में अपना छायांकन स्टूडियो बना लेने वाले हरिश्चन्द्र सखाराम भाटवडेकर भी वॉटसन होटल में आयोजित प्रथम प्रदर्शन में शामिल दो सौ लोगों में से एक थे। सन् 1898 में इक्कीस गिन्नी खर्च करके लूमिएर का सिनेमैटोग्राफ मंगाने वाले भाटवडेकर पहले भारतीय थे। भाटवडेकर को लोग आदर से सावे दादा कहते थे। सावे दादा स्थिर चित्र छायांकन की कला में निपुण थे। इसलिए सिनेमैटोग्राफ का संचालन में उन्हें कोई कठिनाई नहीं हुई। कैमरा आ जाने के बाद उन्होंने बम्बई के हैंगिंग गार्डन पर एक कुश्ती का आयोजन किया और साथ ही इस कुश्ती को फिल्मांकित कर लिया। सावे दादा की दूसरी फिल्म सर्कस के बन्दरों को प्रशिक्षित किये जाने के विषय पर आधारित थी। इन दोनों फिल्म पाट्टियों को धुलने के लिए इंग्लैंड भेजा गया था तथा सन् 1899 में इन फिल्मों को भारत में प्रदर्शित विदेशी फिल्मों के साथ ही दिखाया गया था।[6]

सन् 1901 की कैंब्रिज विश्वविद्यालय की परीक्षा में एक भारतीय विद्यार्थी रैंगलर रघुनाथ पुरुषोत्तम परांजपे[1] (16 फरवरी 1876 – 6 मई 1966) ने गणित में सर्वाधिक अंक प्राप्त किये। हजारों लोग इस विद्यार्थी के भारत आगमन के समय बम्बई बन्दरगाह पर एकत्रित हुए परांजपे का स्वागत पुष्प वर्षा तथा फूल मालाओं से किया गया। यह एक ऐसा अवसर था जिसमें भारतीय और अंग्रेज दोनों उत्साहपूर्वक शामिल हुए थे। सावे दादा ने इन दृश्यों को फिल्मांकित किया। सन् 1901 में बनी इस फिल्म को भारत का पहला वृत्तचित्र भी माना जाता है।[7]

मूलतः भाटवडेकर का काम एक छायाकार का ही था। इससे पूर्व ऐसे अवसरों पर यह छायाकार अपने स्थिर चित्र मैकरे के साथ उपस्थित रहता थां अब वह चलचित्र कैमरे की सहायता से इन दृश्यों को उनकी गतिशीलता में अंकित करने लगा। सन् 1903 में भाटवडेकर ने एडवर्ड सप्तम के राज्याभिषेक के अवसर पर भारत में आयोजित दरबारी समारोह को अपने कैमरे में कैद किया था।

निष्कर्षतः यह प्रमाणित है कि सभी कलायें, भिन्न–भिन्न माध्यमों में निर्मित होकर भी अन्तः सम्बन्धित हैं इसीलिये हमारे शिल्पशास्त्रों में किसी भी एक विधा के सृजनकर्ता के लिये, अन्य विधाओं का ज्ञान वांछित बताया हैं इसके सशक्त प्रमाण आदिकाल से ही मानवीय अभिव्यक्तियों में पर्यवसित हैं। सौन्दर्य काल्पनिकता, बिम्ब, प्रतीक और रूप विधान, ललित कलाओं के शिल्पीय उपादान हैं। सभी कलायें, कल्पना प्रसूत सौन्दर्य की प्रस्तुति का रूपात्मक स्वरूप हैं काव्य और संगीत के बिम्ब और प्रतीक, अदृश्य रूप में कवि तथा संगीतकार की मनःचेतना में विद्यमान रहते हैं। जो शब्दों व स्वरों का रूप लेकर ध्वनित होते हैं, इनका सौदर्य अनुभवगम्य है। जबकि चित्र और मूर्ति के बिम्ब–प्रतीक, भावों की स्थूल प्रस्तुति में साकार होते हैं, यद्यपि ये बिम्ब भी, कलाकार के मानस जगत से उद्‌बुद्ध हो प्रतिरूपात्मक (प्रत्यक्ष) स्वरूप धारण करते हैं इनका सौन्दर्य चाक्षुश प्रत्यक्ष है, अतएव सिनेमा में भी सौन्दर्ययुक्त तत्वों के प्रस्तुतीकरण के लिए चित्रकला, काव्य, साहित्य, संगीत व नाट्य (अभिनय) का समन्वित प्रयोग अति आवश्यक है।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि कलाओं की परस्पर निर्भरता भी उनके अन्तः सम्बन्ध का एक प्रबल प्रमाण है। कलाओं की परस्पर निर्भरता भी उनके अन्तः सम्बन्ध का एक प्रबल प्रमाण है। यह निर्भरता दो रूपों में देखी जा सकती है। प्रथम तो यह कि कलाएँ अपने भौतिक माध्यम विशेष में बँधी रहने के कारण माध्यम की शक्ति और सीमाओं से बाधित रहती हैं जिस वस्तु की व्यंजना की सामर्थ्य किसी कला के माध्यम से नहीं है उसके लिये उसे अन्य कला–माध्यमों पर आश्रित रहना पड़ता है। परस्पर निर्भरता का दूसरा रूप है कि कलाएँ अपने–अपने माध्यमों में दूसरे माध्यमों की विशेषताओं को लेने का प्रयत्न करती है। इन दोनों को कुछ विस्तार से देखना चाहिए।

कलाओं का वर्गीकरण उनके माध्यमों के आधार पर किया गया है। माध्यमों की यह सीमा ही उनके परस्पर आश्रित होने का सबसे बड़ा प्रमाण और कारण है। यह वैसे ही है जैसे किसी अन्धे के कन्धे पर लंगड़ा व्यक्ति बैठा दिया जाए। लँगड़ा चल नहीं सकता और अन्धा देख नहीं सकता। किन्तु दोनों मिलकर एक–दूसरे की कभी को पूरा कर सकते हैं। यही दशा कलाओं की है। चूँकि कलाएँ एक दूसरे पर किसी न किसी रूप में आश्रित है तथा उपरोक्त वर्णन से ज्ञात होता है कि चित्रकला का सिनेमा के प्रारम्भिक चरण से ही गहरा सम्बन्ध है क्योंकि चित्र–छायाचित्र और फिर चलचित्र आधुनिक तकनीकी युग के विकास का प्रतिफलन है, जिसमें नाट्य जैसी कला का सुदृढ़ आधार है सिनेमा से चित्रकला के सम्बन्ध न केवल कलात्मक पृष्ठभूमि होने से है वरन भावनात्मक अभिव्यक्ति का एक माध्यम होने के कारण भी दोनों परस्पर सम्बन्धित है।

संदर्भ :

1. बायोस्कोप क्या है? लेख - site-https://blog.science and media museum.org.uk
2. एस्ट्रेला, एनाबेल – 'सात कलाओं की कहानी और सिनेमा कैसे उन सभी को जोड़ा है।" – इतिहास के सबक में प्रकाशित लेख – 15 अक्टूबर 2000 –site - https://www.medium.com
3. प्रजापति, डॉ. महेन्द्र–"कला विधा के रूप में सिनेमा और उसकी सैद्धान्तिकी" लेख – हिन्दी सिनेमा : यूनिट सिनेमा–1, site-https://www.hansraj college.ac.in (PDF)
4. प्रजापति, डॉ. महेन्द्र – 'कला विद्या के रूप में सिनेमा और उसकी सैद्धांतिकी' लेख–हिन्दी सिनेमा, यूनिट–1
5. साहित्य और सिनेमा : स्वरूप एवं महत्व–शोधपत्र –https://www.shivagi college.ac.in.
6. चड्ढा मनमोहन – हिन्दी सिनेमा का इतिहास, नई दिल्ली,2021,
7. वही